Chapter पन्द्रह

राजा प्रियव्रत के वंशजों का यश-वर्णन

इस अध्याय में भरत महाराज तथा अन्य अनेक राजाओं के पूर्वजों का वर्णन किया गया है। महाराज भरत के पुत्र का नाम सुमति था। उसने ऋषभदेव द्वारा प्रदर्शित मुक्ति-पथ का अनुसरण किया। कुछ लोग गलती से सुमति को भगवान् बुद्ध का साक्षात् अवतार मानते थे। सुमति का पुत्र देवताजित् था और उसका पुत्र देवद्युम्न था जिसका पुत्र परमेष्ठी था और उसका पुत्र प्रतीह था। प्रतीह भगवान् विष्णु का परम भक्त था जिसके तीन पुत्र हुए, जिनके नाम थे—प्रतिहर्ता, प्रस्तोता तथा उद्गाता। प्रतिहर्ता के अज तथा भूमा दो पुत्र हुए। भूमा का पुत्र उद्गीथ तथा उद्गीथ का पुत्र प्रस्ताव था। प्रस्ताव का पुत्र विभु था और विभु का पुत्र पृथुषेण था जिसका पुत्र नक्त था। नक्त की पत्नी द्रुति से गय का जन्म हुआ जो अत्यन्त विख्यात एवं महात्मा राजा था। वास्तव में राजा गय गवान् विष्णु के अंश-अवतार थे और विष्णु के प्रति अपनी अगाध भक्ति के कारण उन्हें महापुरुष की उपाधि दी गई थी।

राजा गय के चित्ररथ, सुमति तथा अवरोधन नामक तीन पुत्र थे। चित्ररथ का पुत्र सम्राट नामक महान् राजा हुआ। उसका पुत्र मरीचि था जिसका पुत्र बिन्दु हुआ। बिन्दु का पुत्र मधु और मधु का पुत्र वीरव्रत था। वीरव्रत के दो पुत्र हुए—मंथु तथा प्रमंथु। मंथु का पुत्र भौवन था, भौवन का पुत्र त्वष्टा और त्वष्टा का पुत्र विरज था, जिसने पूरे वंश को उजागर किया। विरज के एक सौ पुत्र तथा एक पुत्री थी। पुत्रों में से शतजीत नाम का पुत्र अत्यन्त विख्यात हुआ।

श्रीशुक उवाच

भरतस्यात्मजः सुमतिर्नामाभिहितो यमु ह वाव केचित्पाखण्डिन ऋषभपदवीमनुवर्तमानं चानार्या अवेदसमाम्नातां देवतां स्वमनीषया पापीयस्या कलौ कल्पयिष्यन्ति. ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा; भरतस्य—भरत महाराज का; आत्म-जः—पुत्र; सुमतिः नाम-अभिहितः—जिसका नाम सुमति था; यम्—जिसको; उ ह वाव—निस्सन्देह; केचित्—कोई; पाखण्डिनः—वैदिक ज्ञान-विहीन, पाखंडी जन; ऋषभ-पदवीम्—राजा ऋषभदेव के मार्ग का; अनुवर्तमानम्—अनुसरण करते हुए; च—तथा; अनार्याः—वैदिक नियमों का कठोरता से पालन न करने वाले अनार्य; अवेद-समाम्नाताम्—जिनका वेदों में उल्लेख नहीं है; देवताम्—भगवान्बुद्ध या बौद्ध विग्रह के समान; स्व-मनीषया—अपनी बौद्धिक कल्पना से; पापीयस्या—अत्यन्त पापमय; कलौ—इस कलियुग में; कल्पयिष्यन्ति—कल्पना करेंगे।

श्रील शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा—महाराज भरत के पुत्र सुमति ने ऋषभदेव के मार्ग का अनुसरण किया, किन्तु कुछ पाखंडी लोग उन्हें साक्षात् भगवान् बुद्ध मानने लगे। वस्तुतः इन पाखंडी नास्तिक और दुश्चरित्र लोगों ने वैदिक नियमों का पालन काल्पनिक तथा अप्रसिद्ध ढंग से अपने कर्मों की पुष्टि के लिए किया। इस प्रकार इन पापात्माओं ने सुमति को भगवान् बुद्धदेव के रूप में स्वीकार किया और इस मत का प्रवर्तन किया कि प्रत्येक व्यक्ति को सुमति के नियमों का पालन करना चाहिए। इस प्रकार अपनी कोरी कल्पना के कारण वे रास्ते से भटक गये।

तात्पर्य : जो आर्य हैं, वे वैदिक नियमों का कठोरता से पालन करते हैं, किन्तु इस कलियुग में *आर्य समाज* नामक एक संस्था का जन्म हुआ है जो परम्परा से चले आ रहे वेदों के मंतव्य से अनजान है। इसके नेता प्रामाणिक आचार्यों की निन्दा करके अपने आपको वैदिक नियमों का असली पालक मानते हैं। वैदिक नियमों का पालन न करने वाले ऐसे आचार्य इस समय आर्य-समाज या ''जैन'' कहलाते हैं। वे न केवल वैदिक नियमों का पालन ही नहीं करते, प्रत्युत भगवान् बुद्ध से भी उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। सुमति के आचरण का अनुकरण करने के कारण वे अपने को ऋषभदेव की

संततियाँ घोषित करते हैं। वैष्णवजन इनकी संगति से दूर रहते हैं, क्योंकि ये वेद-पथ से अनजान होते हैं। *भगवद्गीता* (१५.१५) में श्रीकृष्ण का वचन है—*वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्य*—"वेदों का वास्तविक प्रयोजन मुझे जान लेना है।" सम्पूर्ण वैदिक शास्त्रों का यही आदेश है। जो भगवान् श्रीकृष्ण की महानता से परिचित नहीं है उसे आर्य नहीं माना जा सकता। भगवान् श्रीकृष्ण के अवतार भगवान् बुद्ध ने *भागवत धर्म* के दर्शन के प्रचार की विशिष्ट विधि अपनाई थी। वे प्राय: नितान्त पाखंडियों (नास्तिकों) को उपदेश देते थे। नास्तिकों को किसी ईश्वर की आवश्यकता नहीं, अत: भगवान् बुद्ध का कथन था कि ईश्वर नहीं है। उन्होंने अपने अनुयायियों के लाभ के लिए उपदेश देने की यह विधि अपनाई। उन्होंने छद्म रूप में उपदेश दिया कि ईश्वर का अस्तित्व नहीं है। ऐसा होते हुए भी वे स्वयं ईश्वर के अवतार थे।

तस्माद्बृद्धसेनायां देवताजिन्नाम पुत्रोऽभवत् ॥ २॥

शब्दार्थ

तस्मात्—सुमति से; वृद्ध-सेनायाम्—उसकी पत्नी वृद्धसेना के गर्भ से; देवताजित्-नाम—देवताजित् नामक; पुत्र:—पुत्र; अभवत्—उत्पन्न हुआ।

सुमति की पत्नी वृद्धसेना के गर्भ से देवताजित् नामक पुत्र का जन्म हुआ।

अथासुर्यां तत्तनयो देवद्युम्नस्ततो धेनुमत्यां सुत: परमेष्ठी तस्य सुवर्चलायां प्रतीह उपजात:. ॥ ३॥

शब्दार्थ

अथ—तत्पश्चात्; आसुर्याम्—उसकी पत्नी आसुरी के गर्भ से; तत्-तनय:—देवताजित् का एक पुत्र; देव-द्युम्न:—देवद्युम्न नाम का; तत:—देवद्युम्न से; धेनु-मत्याम्—देवद्युम्न की पत्नी धेनुमती के गर्भ से; सुत:—एक पुत्र; परमेष्ठी—परमेष्ठी नामक; तस्य—परमेष्ठी की; सुवर्चलायाम्—पत्नी सुवर्चला के गर्भ से; प्रतीह:—प्रतीह नाम का पुत्र; उपजात:—उत्पन्न हुआ।

तत्पश्चात् देवताजित् की पत्नी आसुरी के गर्भ से देवद्युम्न नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। देवद्युम्न की पत्नी धेनुमती के गर्भ से परमेष्ठी नामक पुत्र का और परमेष्ठी की पत्नी सुवर्चला के गर्भ से प्रतीह नाम के पुत्र का जन्म हुआ।

य आत्मविद्यामाख्याय स्वयं संशुद्धो महापुरुषमनुसस्मार. ॥ ४॥

शब्दार्थ

य:—जिसने (राजा प्रतीह ने); आत्म-विद्याम् आख्याय—आत्म-साक्षात्कार के सम्बन्ध में अनेक लोगों को शिक्षा देने के पश्चात्; स्वयम्—स्वत:; संशुद्ध:—आत्म-साक्षात्कार में अतीव समुन्नत एवं परिशुद्ध; महा-पुरुषम्—भगवान् को; अनुसस्मार—भलीभाँति समझा और निरन्तर स्मरण किया।

राजा प्रतीह ने स्वयं आत्म-साक्षात्कार के सिद्धान्तों का प्रसार किया। इस प्रकार शुद्ध होकर वे परम पुरुष भगवान् विष्णु के महान् भक्त बन गये और प्रत्यक्षत: उनका साक्षात्कार किया।

तात्पर्य : *अनुसस्मार* शब्द अत्यन्त सार्थक है। भगवद्भावना न तो काल्पनिक है, न ही मनगढ़न्त। विशुद्ध एवं महान् भक्त भगवान् का यथानुरूप साक्षात्कार करता है। महाराज प्रतीह ने ऐसा ही किया। भगवान् विष्णु का प्रत्यक्ष साक्षात्कार कर लेने के बाद उन्होंने आत्म-साक्षात्कार का प्रचार किया और वे स्वयं उपदेशक बन गये। सच्चा उपदेशक कभी छल्ली नहीं होता; पहले उसे भगवान् विष्णु का उसी रूप में साक्षात्कार करना होता है। जिस रूप में *भगवद्गीता* (४.३४) में पुष्टि की गई है—*उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन:*—"जिसने सत्य को देखा है, वही ज्ञान प्रदान कर सकता है।" *तत्त्वदर्शी* शब्द से ऐसे व्यक्ति का बोध होता है, जिसने सम्यक् रीति से पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का साक्षात्कार प्राप्त किया हो। ऐसा पुरुष गुरु हो सकता है और सारे विश्व में वैष्णव दर्शन की स्थापना कर सकता है। राजा प्रतीह प्रामाणिक उपदेशकों एवं गुरु के आदर्श स्वरूप हैं।

प्रतीहात्सुवर्चलायां प्रतिहर्त्रादयस्त्रय आसन्निज्याकोविदा: सूनव: प्रतिहर्तु: स्तुत्यामजभूमानावजनिषाताम्. ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

प्रतीहात्—राजा प्रतीह से; सुवर्चलायाम्—उसकी पत्नी सुवर्चला के गर्भ से; प्रतिहर्तृ-आदय: त्रय:—प्रतिहर्ता, प्रस्तोता तथा उद्गाता नाम के तीन पुत्र; आसन्—उत्पन्न हुए; इज्या-कोविदा:—वेदों के अनुष्ठानों में अत्यन्त दक्ष; सूनव:—तीनों पुत्र; प्रतिहर्तु:—प्रतिहर्ता से; स्तुत्याम्—उसकी पत्नी स्तुती के गर्भ से; अज-भूमानौ—अज तथा भूमा नाम के दो पुत्र; अजनिषाताम्—आविर्भूत हुए।

प्रतीह की पत्नी सुवर्चला के गर्भ से प्रतिहर्ता, प्रस्तोता तथा उद्गाता नाम के तीन पुत्र उत्पन्न हुए। ये तीनों पुत्र वैदिक अनुष्ठानों में अत्यन्त दक्ष थे। प्रतिहर्ता की भार्या स्तुती के गर्भ से अज तथा भूमा नामक दो पुत्रों का जन्म हुआ।

भूम्न ऋषिकुल्यायामुद्गीथस्तत: प्रस्तावो देवकुल्यायां प्रस्तावान्नियुत्सायां हृदयज आसीद्विभुर्विभो रत्यां च पृथुषेणस्तस्मान्नक्त आकूत्यां जज्ञे नक्ताद्द्रुतिपुत्रो गयो राजर्षिप्रवर उदारश्रवा अजायत साक्षाद्भगवतो विष्णोर्जगद्रिरक्षिषया गृहीतसत्त्वस्य कलात्मवत्त्वादिलक्षणेन महापुरुषतां प्राप्त:. ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

भूम्नः—राजा भूमा से; ऋषि-कुल्यायाम्—उसकी पत्नी ऋषिकुल्या के गर्भ से; उद्गीथः—उद्गीथ नामक पुत्र; ततः—फिर राजा उद्गीथ से; प्रस्तावः—प्रस्ताव नामक पुत्र; देव-कुल्यायाम्—उसकी पत्नी देवकुल्या से; प्रस्तावात्—राजा प्रस्ताव से; नियुत्सायाम्—नियुत्सा नाम वाली उसकी पत्नी से; हृदय-जः—पुत्र; आसीत्—उत्पन्न हुआ; विभुः—विभु नामक; विभोः—राजा विभु से; रत्याम्—उसकी पत्नी रती से; च—भी; पृथु-षेणः—पृथुषेण नाम का; तस्मात्—उससे (पृथुषेण से); नक्तः—नक्त नामक पुत्र; आकूत्याम्—उसकी पत्नी आकूती से; जज्ञे—जन्म लिया; नक्तात्—नक्त राजा से; द्रुति-पुत्रः—द्रुति का पुत्र; गयः—गय नामक राजा; राज-ऋषि-प्रवरः—राजर्षियों में अत्यन्त सम्मान्य; उदार-श्रवाः—अत्यन्त पवित्र राजा के रूप में विख्यात; अजायत—उत्पन्न हुआ; साक्षात् भगवतः—साक्षात् भगवान्; विष्णोः—भगवान् विष्णु का; जगत्-रिरक्-षिषया—समस्त संसार की रक्षा के हेतु; गृहीत—गर्भ में वास किया; सत्त्वस्य—शुद्ध सत्त्व गुण का; कला-आत्म-वत्त्व-आदि—भगवान् के साक्षात् अवतार के रूप में; लक्षणेन—लक्षणों से; महा-पुरुषताम्—मानव समाज के नायक होने का मुख्य गुण (सम्पूर्ण जीवित प्राणियों के नायक भगवान् विष्णु के सदृश); प्राप्तः—प्राप्त किया।

राजा भूमा की पत्नी ऋषिकुल्या के गर्भ से उद्गीथ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। उद्गीथ की पत्नी देवकुल्या से प्रस्ताव नामक पुत्र ने जन्म लिया और प्रस्ताव को अपनी पत्नी नियुत्सा से विभु नामक पुत्र की प्राप्ति हुई। विभु की पत्नी रती के गर्भ से पृथुषेण और पृथुषेण की पत्नी आकूती के गर्भ से नक्त नामक पुत्र ने जन्म लिया। नक्त की पत्नी द्रुति हुई, जिसके गर्भ से गय नामक महान् राजा उत्पन्न हुआ। गय अत्यन्त विख्यात एवं पवित्र था, वह राजर्षियों में सर्वश्रेष्ठ था। भगवान् विष्णु तथा उनके सभी अंश विश्व की रक्षा के लिए हैं और वे सदैव दिव्य सत्त्वगुण में, जिसे विशुद्ध सत्त्व कहते हैं, विद्यमान रहते हैं। भगवान् विष्णु के साक्षात् अंश होने के कारण राजा गय भी विशुद्ध-सत्त्व में आसीन थे। इस कारण महाराज गय दिव्य ज्ञान से युक्त थे और इसलिए वे महापुरुष कहलाए।

तात्पर्य : इस श्लोक से ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् के अनेक अवतार हैं। इनमें से कुछ तो भगवान् विष्णु के सीधे विस्तार के विभिन्न अंश हैं, तो कुछ सीधे विस्तार हैं। श्रीभगवान् का प्रत्यक्ष अवतार *अंश* या *स्वांश* कहलाता है जब कि *अंश* के अवतार को *कला* कहते हैं। कलाओं के अन्तर्गत *विभिन्नांश जीव* अथवा जीवात्माएँ होती हैं। इनकी गणना *जीव-तत्त्वों* में की जाती है। भगवान् विष्णु से प्रत्यक्ष प्राप्त होने वाली जीवात्माएँ *विष्णुतत्त्व* कहलाती हैं और कभी-कभी इन्हें महापुरुष कहा जाता है। श्रीकृष्ण का दूसरा नाम महापुरुष है और कभी-कभी भक्त को *महापौरुषिक* कहा जाता है।

स वै स्वधर्मेण प्रजापालनपोषणप्रीणनोपलालनानुशासनलक्षणेनेज्यादिना च भगवति महापुरुषे परावरे ब्रह्मणि सर्वात्मनार्पितपरमार्थलक्षणेन ब्रह्मविच्चरणानुसेवयापादितभगवद्भक्तियोगेन चाभीक्ष्णशः परिभावितातिशुद्धमतिरुपरतानात्म्य आत्मनि स्वयमुपलभ्यमानब्रह्मात्मानुभवोऽपि निरभिमान एवावनिमजूगुपत्. ॥ ७॥

शब्दार्थ

स:—वह राजा गय; वै—निश्चय ही; स्व-धर्मेण—अपने कर्तव्य के द्वारा; प्रजा-पालन—प्रजा का पालन करने; पोषण—प्रजा का भरण करने; प्रीणन—सभी तरह से उसे सुखी बनाने; उपलालन—उसे पुत्र की भाँति रखने; अनुशासन—कभी-कभी त्रुटियों के लिए दण्डित करने; लक्षणेन—राजा के लक्षणों से; इज्या-आदिना—वेदोक्त विधि से यज्ञ सम्पन्न करके; च—भी; भगवति—श्रीभगवान्, विष्णु; महा-पुरुषे—समस्त जीवात्माओं में प्रमुख; पर-अवरे—भगवान् ब्रह्मा से लेकर अकिंचन चींटी तक समस्त जीवात्माओं का स्त्रोत; ब्रह्मणि—परब्रह्म पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् वासुदेव में; सर्व-आत्मना—सभी प्रकार से; अर्पित—समर्पित, शरणागत; परम-अर्थ-लक्षणेन—चिन्मय लक्षणों से; ब्रह्म-वित्—स्वरूप-सिद्ध सन्त भक्तों के; चरण-अनुसेवया—चरणारविन्दों की सेवा करके; आपादित—प्राप्त किया; भगवत्-भक्ति-योगेन—भगवान् की भक्ति के अभ्यास से; च—भी; अभीक्ष्णश:—अनवरत, सतत्; परिभावित—संतृप्त; अति-शुद्ध-मति:—जिसकी विशुद्ध चेतना (ऐसी पूर्ण चेतना कि शरीर तथा मन आत्मा से पृथक् है); उपरत-अनात्म्ये—जिसमें भौतिक वस्तुओं की पहचान रुक जाती है; आत्मनि—अपने में; स्वयम्—स्वयं; उपलभ्यमान—साक्षात्कार होते हुए; ब्रह्म-आत्म-अनुभव:—अपनी स्थिति का परब्रह्म के रूप में दर्शन; अपि—यद्यपि; निरभिमान:—अभिमानरहित, झूठी बड़ाई के बिना; एव—इस प्रकार; अवनिम्—सम्पूर्ण संसार पर; अजूगुपत्—वैदिक विधियों के अनुसार दृढ़ता से शासन किया।.

राजा गय ने अपनी प्रजा को पूर्ण सुरक्षा प्रदान की जिससे अवांछित तत्त्वों के द्वारा उनकी निजी सम्पत्ति को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचे। उन्होंने इसका भी ध्यान रखा कि प्रजा को पर्याप्त भोजन प्राप्त हो (यही ''पोषण'' है)। कभी-कभी प्रजा को प्रसन्न रखने के लिए वे दान देते थे (यह ''प्रीणन'' कहलाता है)। कभी-कभी वे प्रजा की सभाएं बुलाते और मृदु वचनों से उन्हें तुष्टि प्रदान करते (यह ''उपलालन'' कहलाता है)। वे उन्हें उच्चकोटि के नागरिक बनने की शिक्षा देते (यह ''अनुशासन'' कहलाता है)। राजा गय में इस प्रकार की विलक्षणताएँ थीं। इन सबके साथ ही साथ राजा गय गृहस्थ थे और वे गृहस्थ जीवन के सभी नियमों का कड़ाई से पालन करते थे। वे यज्ञ करते थे तथा श्रीभगवान् के एकनिष्ठ भक्त थे। वे महापुरुष कहे जाते थे, क्योंकि राजा के रूप में उन्होंने नागरिकों को सभी सुविधाएं प्रदान कीं गृहस्थ के रूप में वे सभी कर्तव्यों का पालन करने वाले थे। फलस्वरूप वे अन्तत: भगवान् के परम भक्त हुए। भक्त के रूप में वे सभी भक्तों का आदर करने और भगवान् की सेवा करने को उद्यत रहते थे। यह भक्तियोग की प्रक्रिया है। इन दिव्य कर्मों के कारण राजा गय देहात्मबोध से सदैव मुक्त रहे। वे ब्रह्मसाक्षात्कार में लीन रहने के कारण सदैव प्रमुदित रहते थे। उन्हें भौतिक पश्चात्ताप का अनुभव नहीं करना पड़ा। सभी प्रकार से पूर्ण होने पर भी वे न तो गर्व करते थे, न ही राज्य करने लिए लालायित थे।

तात्पर्य : भगवान् श्रीकृष्ण ने *भगवद्गीता* में कहा है कि वे धरती पर दो प्रकार के प्रयोजनों से अवतरित होते हैं—साधु पुरुषों का उद्धार करने तथा असुरों का नाश करने (*परित्राणाय साधूनां*

विनाशाय च दुष्कृताम्)। राजा श्रीभगवान् का प्रतिनिधि होता है, इसीलिए उसे कभी-कभी *नरदेव* अर्थात् मनुष्यों का स्वामी कहते हैं। वैदिक आदेशों के अनुसार संसार में उसकी ईश्वर तुल्य पूजा की जाती है। श्रीभगवान् का प्रतिनिधि होने के नाते राजा का यह परम कर्तव्य होता था कि वह प्रजा की भलीभाँति रक्षा करे जिससे प्रजा को भोजन तथा सुरक्षा की चिन्ता न रहे और वह प्रसन्न चित्त रहे। राजा प्रजा को सभी कुछ देता था और इन सबके लिए वह उन पर कर लगाता था। यदि कोई राजा या राज सत्ता किसी और कारण से कर लगाता है, तो वह प्रजा के पापों का भागी होता है। कलियुग में (एकाधिकार) राजतंत्र समाप्त हो गया है क्योंकि राजाओं पर भी इस कलियुग का प्रभाव पड़ गया है। *रामायण* से पता चलता है कि विभीषण ने राजा रामचन्द्र के साथ मैत्री स्थापित हो जाने के बाद वचन दिया था कि यदि वह दैववश या इच्छा से उनके साथ मित्रता भंग करे तो कलियुग में वह *ब्राह्मण* या राजा बनेगा। जैसाकि विभीषण ने संकेत किया है, इस युग में ब्राह्मण तथा राजा दोनों ही दयनीय स्थिति को प्राप्त हैं। सच तो यह है कि इस युग में न तो कोई राजा है, न ब्राह्मण और उनके न होने से सम्पूर्ण विश्व अव्यवस्थित है और सदैव संकटग्रस्त बना हुआ है। वर्तमान मानदण्ड के अनुसार महाराज गय विष्णु के सच्चे प्रतिनिधि थे, इसीलिए वे महापुरुष कहलाए।

तस्येमां गाथां पाण्डवेय पुराविद उपगायन्ति. ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

तस्य—राजा गय के; इमाम्—ये; गाथाम्—स्तुतिपरक पद्य; पाण्डवेय—हे महाराज परीक्षित; पुरा-विदः—पुराणों की ऐतिहासिक घटनाओं के ज्ञाता, उपगायन्ति; उपगायन्ति—.

तस्य—राजा गय के; इमाम्—ये; गाथाम्—स्तुतिपरक पद्य; पाण्डवेय—हे महाराज परीक्षित; पुरा-विदः—पुराणों की ऐतिहासिक घटनाओं के ज्ञाता, उपगायन्ति—गाते हैं।

हे राजा परीक्षित्, पुराणों को जानने वाले विद्वान राजा गय की स्तुति और महिमागान निम्नलिखित श्लोकों से करते हैं।

तात्पर्य : वर्तमान शासकों के लिए महान् राजाओं के ऐतिहासिक प्रसंग आदर्श उपस्थित करने वाले हैं। वर्तमान काल में विश्व पर शासन करने वालों को चाहिए कि वे राजा गय, राजा युधिष्ठिर तथा राजा पृथु से शिक्षा ग्रहण करें और प्रजा पर इस प्रकार शासन करें जिससे वह सुखी रहे। आजकल की सरकारें किसी प्रकार का सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक या राजनीतिक सुधार किये बिना ही कर

उगाहे जा रही हैं। वेदों के अनुसार इसकी अनुमति नहीं है।

गयं नृपः कः प्रतियाति कर्मभि-
र्यज्वाभिमानी बहुविद्धर्मगोप्ता ।
समागतश्रीः सदसस्पतिः सतां
सत्सेवकोऽन्यो भगवत्कलामृते ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

गयम्—गय; नृपः—राजा; कः—कौन; प्रतियाति—तुलनीय है; कर्मभिः—कर्मों के कारण; यज्वा—जिसने समस्त यज्ञ किये; अभिमानी—सारे विश्व में अत्यधिक सम्मानित; बहु-वित्—वैदिक शास्त्रों से भली-भाँति ज्ञात; धर्म-गोप्ता—प्रत्येक व्यक्ति के कार्यों का संरक्षक; समागत-श्रीः—सभी प्रकार के वैभव से युक्त; सदसः-पतिः सताम्—महान् व्यक्तियों की सभा का अध्यक्ष; सत्-सेवकः—भक्तों का सेवक; अन्यः—अन्य कोई; भगवत्-कलाम्—श्रीभगवान् की कला (अवतार); ऋते—के अतिरिक्त।

महान् राजा गय सभी प्रकार के वैदिक अनुष्ठान किया करते थे। वे अत्यन्त बुद्धिमान और सभी वैदिक शास्त्रों के अध्ययन में दक्ष थे। उन्होंने धार्मिक नियमों की रक्षा की और वे समस्त वैभव से युक्त थे। वे सज्जनों के नायक और भक्तों के सेवक थे। वे श्रीभगवान् के सच्चे अर्थों में सर्वथा समर्थ अंश (कला) थे। अतः महान् अनुष्ठानों (यज्ञ) को सम्पन्न करने में उनकी तुलना कौन कर सकता है?

यमभ्यषिञ्चन्परया मुदा सतीः
सत्याशिषो दक्षकन्याः सरिद्भिः ।
यस्य प्रजानां दुदुहे धराशिषो
निराशिषो गुणवत्सस्नुतोधाः ॥ १० ॥

शब्दार्थ

यम्—जिसको; अभ्यषिञ्चन्—अभिषेक करती थीं; परया—अत्यन्त (परम); मुदा—सन्तोष से; सतीः—अपने पतियों के प्रति भक्तिभाव रखने वाली तथा पतिव्रता स्त्रियाँ; सत्य—सच्चे; आशिषः—आशीर्वाद; दक्ष-कन्याः—राजा दक्ष की पुत्रियाँ; सरिद्भिः—पवित्र जल के द्वारा; यस्य—जिसकी; प्रजानाम्—प्रजा की; दुदुहे—पूरा किया; धरा—पृथ्वी ने; आशिषः—समस्त कामनाओं का; निराशिषः—यद्यपि स्वयं कामनारहित होकर; गुण-वत्स-स्नुत-उधाः—प्रजा पर राज्य करने वाले गय के गुणों को देखकर गो रूप पृथ्वी के थन से दुग्ध की धारा निकल आई।

महाराज दक्ष की श्रद्धा, मैत्री तथा दया जैसी पतिव्रता तथा सत्यनिष्ठ कन्याएँ जिनके आशीर्वाद सदा फलित होते थे, पवित्र जल से महाराज गय का अभिषेक करती थीं। असल में वे सभी महाराज गय से अत्यधिक सन्तुष्ट थीं। पृथ्वी स्वयं गौ रूप में प्रकट हुई और महाराज गय के उत्तम गुणों को देखकर दुग्ध स्त्रवण करने लगी, मानो गाय ने अपने वत्स को देखा हो। तात्पर्य यह है कि महाराज गय पृथ्वी के समस्त साधनों से लाभ उठा करके अपनी प्रजा की आकांक्षाओं

को पूरा करते थे। फिर भी वे निस्पृह थे।

तात्पर्य : महाराज गय द्वारा शासित पृथ्वी की तुलना गऊ से और जिन सद्गुणों के कारण वे प्रजा पर शासन करते थे उनकी तुलना बछड़े से की गई है। बछड़े की उपस्थिति में गाय दूध देती है, उसी प्रकार यह पृथ्वी अर्थात् गाय महाराज गय की आकांक्षाओं को पूर्ण करने वाली थी, क्योंकि वे अपनी प्रजा के लाभार्थ पृथ्वी के समस्त साधनों का उपयोग करने में समर्थ थे। ऐसा इसलिए सम्भव हो सका, क्योंकि दक्ष की सच्चरित्र कन्याओं ने पवित्र जल से उनका अभिषेक किया था। जब तक कोई राजा या शासक उच्चाधिकारियों द्वारा आशीर्वाद प्राप्त नहीं करता, तब तक वह सन्तोषजनक रीति से प्रजा पर शासन नहीं कर सकता है। शासक के सद्गुणों से ही प्रजा प्रसन्न होती है और योग्य बनती है।

छन्दांस्यकामस्य च यस्य कामान्
दुदूहुराजह्रुरथो बलिं नृपाः ।
प्रत्यञ्चिता युधि धर्मेण विप्रा
यदाशिषां षष्ठमंशं परेत्य ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

छन्दांसि—वेदों के समस्त अंग; अकामस्य—निष्काम; च—भी; यस्य—जिसकी; कामान्—समस्त इच्छाएँ; दुदूहुः—प्रदान किया; आजह्रुः—अर्पित किया; अथो—इस प्रकार; बलिम्—भेंट, बलि; नृपाः—सभी राजा; प्रत्यञ्चिताः—उसके विपक्ष में युद्ध करने से सन्तुष्ट होकर; युधि—युद्ध में; धर्मेण—धार्मिक नियमों से; विप्राः—समस्त ब्राह्मण; यदा—जब; आशिषाम्—आशीर्वादों का; षष्ठम् अंशम्—छठा अंश; परेत्य—अगले जन्म में।

यद्यपि महाराज गय में इन्द्रियतृप्ति के लिए किसी प्रकार की व्यक्तिगत इच्छा नहीं थी, किन्तु वैदिक अनुष्ठानों को पूरा करने के कारण उनकी सम्पूर्ण इच्छाओं की पूर्ति होती रहती थी। जिन राजाओं से महाराज गय को युद्ध करना पड़ता, वे धर्मयुद्ध करने के लिए विवश हो जाते। वे महाराज गय के युद्ध से अत्यन्त सन्तुष्ट होकर उन्हें सभी प्रकार की भेंटें प्रदान करते थे। इसी प्रकार से उनके राज्य के समस्त ब्राह्मण उनके मुक्त दान से अत्यन्त सन्तुष्ट रहते थे। फलस्वरूप ब्राह्मणों ने राजा गय को अगले जन्म में प्राप्त होने के लिए अपने पुण्यकर्मों का छठा अंश सहर्ष प्रदान किया था।

तात्पर्य : क्षत्रिय होने के नाते महाराज गय को अपना शासन स्थिर रखने के लिए कभी-कभी अधीनस्थ राजाओं से युद्ध करना पड़ता था। किन्तु अधीनस्थ राजा कभी भी उनसे असन्तुष्ट नहीं हुए, क्योंकि वे जानते थे कि महाराज गय धार्मिक नियमों के लिए लड़ते थे। फलतः वे उनकी अधीनता

स्वीकार करके उन्हें नाना प्रकार की भेंटें अर्पित करते रहते थे। इसी प्रकार वैदिक अनुष्ठानों में रत ब्राह्मणजन भी राजा से अत्यन्त सन्तुष्ट रहते थे, यहाँ तक कि वे सहर्ष अपने पुण्यकर्मों का छठा अंश उनके अगले जन्म के लाभार्थ प्रदान करने के लिए राजी हो गये। इस तरह ब्राह्मण तथा क्षत्रिय सभी महाराज गय से अत्यन्त सन्तुष्ट थे। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि महाराज गय ने क्षत्रिय राजाओं को अपने युद्ध से तथा ब्राह्मणों को अपने दान से सन्तुष्ट कर रखा था। वैश्य भी राजा के उदार वचनों तथा प्रेमपूर्ण व्यवहार से प्रसन्न रहते थे। शूद्र उनके सतत यज्ञों से प्रचुर भोजन तथा दान प्राप्त करके सन्तुष्ट थे। इस प्रकार महाराज गय अपनी समस्त प्रजा को अत्यधिक सन्तुष्ट रखते थे। जब ब्राह्मणों एवं साधुओं का सम्मान किया जाता है, तो वे सम्मान और सेवा करने वालों को अपने पुण्यकर्मों का एक अंश सहर्ष प्रदान कर देते हैं। अत: जैसाकि *भगवद्गीता* (४.३४) में कहा गया है—*तद्विद्धि प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन सेवया*—मनुष्य को चाहिए कि वह सद्गुरु के शरणागत होकर दण्डवत् प्रणाम, विनम्र जिज्ञासा और निष्कपट भाव से उसकी सेवा करे।

यस्याध्वरे भगवानध्वरात्मा
मघोनि माद्यत्युरुसोमपीथे ।
श्रद्धाविशुद्धाचलभक्तियोग
समर्पितेज्याफलमाजहार ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

यस्य—जिसका (राजा गय का); अध्वरे—विभिन्न यज्ञों में; भगवान्—भगवान्; अध्वर-आत्मा—समस्त यज्ञों के परम भोक्ता, यज्ञ पुरुष; मघोनि—जब राजा इन्द्र; माद्यति—मदान्ध हो जाता है; उरु—अत्यधिक; सोम-पीथे—मादक सोमरस का पान करते हुए; श्रद्धा—भक्ति से; विशुद्ध—शुद्ध; अचल—तथा स्थिर; भक्ति-योग—भक्ति के द्वारा; समर्पित—चढ़ाया गया, अर्पित; इज्या—पूजन का; फलम्—फल, परिणाम; आजहार—स्वयं स्वीकार किया।

महाराज गय के यज्ञों में सोम नामक मादक द्रव्य का अत्यधिक प्रयोग होता था। इनमें राजा इन्द्र आया करते थे और प्रचुर मात्रा में सोमरस पीकर मदान्ध हो जाते थे। भगवान् श्रीविष्णु (यज्ञ पुरुष) भी आया करते थे और यज्ञ क्षेत्र में विशुद्ध भक्तिपूर्वक उनको समर्पित किये गये यज्ञफल को स्वयं स्वीकार करते थे।

तात्पर्य : महाराज गय इतने सिद्ध थे कि स्वर्ग के राजा इन्द्र के अधीन सभी देवता उनसे सन्तुष्ट रहते थे। भगवान् विष्णु स्वयं यज्ञ-क्षेत्र में हव्य ग्रहण करने के लिए आते थे। महाराज गय को अनिच्छित ही देवताओं तथा श्रीभगवान् के आशीर्वाद प्राप्त हुआ करते थे।

यत्प्रीणनाद्बर्हिषि देवतिर्यङ्-
मनुष्यवीरुत्तृणमाविरिञ्चात् ।
प्रीयेत सद्यः स ह विश्वजीवः
प्रीतः स्वयं प्रीतिमगाद्गयस्य ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

यत्-प्रीणनात्—श्रीभगवान् के प्रसन्न होने से; बर्हिषि—यज्ञ क्षेत्र में; देव-तिर्यक्—देवता तथा निम्न पशु; मनुष्य—मानव समाज; वीरुत्—पादप तथा वृक्ष; तृणम्—घास; आ-विरिञ्चात्—भगवान् ब्रह्मा तक; प्रीयेत—सन्तुष्ट हो जाता है; सद्यः—तुरन्त; सः—श्रीभगवान्; ह—निश्चय ही; विश्व-जीवः—समस्त संसार के जीवात्माओं का पालन करने वाला; प्रीतः—यद्यपि सहज तुष्ट हैं; स्वयम्—साक्षात्; प्रीतिम्—सन्तोष के; अगात्—प्राप्त हुआ; गयस्य—महाराज गय के।

जब परमेश्वर किसी व्यक्ति के कर्मों से प्रसन्न होते हैं, तो ब्रह्मा से लेकर समस्त देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी, लताएँ, तृण तथा अन्य समस्त जीवात्माएँ स्वतः प्रसन्न हो जाती हैं। पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सबों के परमात्मा हैं और वे स्वभाव से परम प्रसन्न रहते हैं। तो भी वे महाराज गय के यज्ञ क्षेत्र में आये और उन्होंने कहा, ''मैं पूर्णतया प्रसन्न हूँ।''

तात्पर्य : यहाँ यह स्पष्ट कहा गया है कि केवल श्रीभगवान् को प्रसन्न कर लेने पर देवता तथा अन्य समस्त जीवात्माएँ बिना किसी भेदभाव के प्रसन्न हो जाती हैं। वृक्ष की जड़ों को सींचने से सभी शाखाएँ, पत्तियाँ तथा फूल हरे-भरे हो जाते हैं। यद्यपि श्रीभगवान् आत्म-तुष्ट रहने वाले हैं, किन्तु महाराज गय के आचरण से परम प्रसन्न होकर वे उनके यज्ञ क्षेत्र में स्वयं आये और उन्होंने कहा, ''मैं पूर्ण सन्तुष्ट हूँ।'' भला महाराज गय की समता कौन कर सकता है?

गयाद्गयन्त्यां चित्ररथः सुगतिरवरोधन इति त्रयः पुत्रा बभूवुश्चित्ररथादूर्णायां सम्राडजनिष्ट; तत उत्कलायां मरीचिर्मरीचेर्बिन्दुमत्यां बिन्दुमानुदपद्यत तस्मात्सरघायां मधुर्नामाभवन्मधोः सुमनसि वीरव्रतस्ततो भोजायां मन्थुप्रमन्थू जज्ञाते मन्थोः सत्यायां भौवनस्ततो दूषणायां त्वष्टाजनिष्ट त्वष्टुर्विरोचनायां विरजो विरजस्य शतजित्प्रवरं पुत्रशतं कन्या च विषूच्यां किल जातम् ॥ १४-१५ ॥

शब्दार्थ

गयात्—महाराज गय से; गयन्त्याम्—उनकी पत्नी गयन्ती के; चित्र-रथः—चित्ररथ नामक; सुगतिः—सुगति नामक; अवरोधनः—अवरोधन नामक; इति—इस प्रकार; त्रयः—तीन; पुत्राः—पुत्र; बभूवुः—उत्पन्न हुए; चित्ररथात्—चित्ररथ से; ऊर्णायाम्—ऊर्णा के गर्भ से; सम्राट्—सम्राट नामक पुत्र; अजनिष्ट—उत्पन्न हुआ; ततः—उससे; उत्कलायाम्—उत्कला नामक पत्नी से; मरीचिः—मरीचि; मरीचेः—मरीचि से; बिन्दु-मत्याम्—उसकी पत्नी बिन्दुमती के गर्भ से; बिन्दुम्—बिन्दु नाम का पुत्र; आनुदपद्यत—उत्पन्न हुआ; तस्मात्—उससे; सरघायाम्—सरघा नाम की पत्नी के गर्भ से; मधुः—मधु; नाम—नामक; अभवत्—जन्म लिया; मधोः—मधु से; सुमनसि—उसकी पत्नी सुमना के गर्भ से; वीर-व्रतः—वीरव्रत नामक पुत्र; ततः—वीरव्रत से; भोजायाम्—उसकी पत्नी भोजा से; मन्थु-प्रमन्थू—मन्थु तथा प्रमन्थु नाम के दो पुत्र; जज्ञाते—उत्पन्न हुए; मन्थोः—मन्थु से; सत्यायाम्—उसकी पत्नी सत्या से; भौवनः—भौवन नामक पुत्र; ततः—उससे; दूषणायाम्—उसकी पत्नी दूषणा के गर्भ से; त्वष्टा—त्वष्टा नाम का एक पुत्र; अजनिष्ट—उत्पन्न हुआ; त्वष्टुः—त्वष्टा से; विरोचनायाम्—उसकी पत्नी विरोचना के;

विरज:—विरज नाम का एक पुत्र; विरजस्य—राजा विरज का; शतजित्-प्रवरम्—(जिनमें) शतजित सर्वोपरि था; पुत्र-शतम्—एक सौ पुत्र; कन्या—एक पुत्री; च—भी; विषूच्याम्—उसकी पत्नी विषूची के; किल—निश्चय ही; जातम्—जन्म लिया।.

गयन्ती के गर्भ से महाराज गय के तीन पुत्र हुए जिनके नाम थे—चित्ररथ, सुगति तथा अवरोधन। चित्ररथ की पत्नी ऊर्णा से सम्राट नाम का पुत्र प्राप्त हुआ। सम्राट् की पत्नी का नाम उत्कला था जिसके गर्भ से सम्राट को मरीचि नामक पुत्र का लाभ हुआ। मरीचि की पत्नी बिन्दुमति से बिन्दु नामक पुत्र हुआ। बिन्दु की पत्नी सरघा के गर्भ से मधु नामक एक पुत्र ने जन्म लिया। मधु की पत्नी सुमना से वीरव्रत और वीरव्रत की पत्नी भोजा से मन्थु तथा प्रमन्थु नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए। मन्थु की पत्नी सत्या से भौवन नाम का पुत्र और भौवन की पत्नी दूषणा से त्वष्टा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। त्वष्टा की पत्नी विरोचना से विरज नाम का पुत्र हुआ और उसकी पत्नी विषूची के गर्भ से एक सौ पुत्र तथा एक पुत्री उत्पन्न हुई। इन सभी पुत्रों में शतजित् नाम का पुत्र सर्वोपरि था।

तत्रायं श्लोक:—

प्रैयव्रतं वंशमिमं विरजश्चरमोद्भव: ।
अकरोदत्यलं कीर्त्या विष्णु: सुरगणं यथा ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

तत्र—उस प्रसंग में; अयम् श्लोक:—यह प्रसिद्ध श्लोक है; प्रैयव्रतम्—राजा प्रियव्रत से चलने वाला; वंशम्—वंश; इमम्—यह; विरज:—राजा विरज; चरम-उद्भव:—एक सौ पुत्रों (जिनमें शतजित् सर्वोपरि था) का स्रोत; अकरोत्—अलंकृत किया; अति-अलम्—अत्यधिक; कीर्त्या—अपनी कीर्ति से; विष्णु:—भगवान् विष्णु, श्रीभगवान्; सुर-गणम्—देवता गण; यथा—जिस प्रकार।.

राजा विरज के सम्बन्ध में यह श्लोक प्रसिद्ध है (जिसका अर्थ है)—''अपने उच्च गुणों तथा व्यापक कीर्ति के कारण राजा विरज उसी प्रकार से प्रियव्रत राजा के वंश के मणि हो गए जिस प्रकार भगवान् विष्णु अपनी दिव्य शक्ति द्वारा देवताओं को विभूषित करते और उन्हें आशीष देते हैं।''

तात्पर्य : पुष्पित वृक्ष अपने सुगन्धित फूलों के कारण उद्यान में अच्छी ख्याति अर्जित करता है। इसी प्रकार यदि किसी वंश में कोई प्रसिद्ध व्यक्ति होता है, तो उसकी उपमा वन के सुगन्धित पुष्प से दी जाती है। उसके कारण पूरा वंश इतिहास-प्रसिद्ध हो सकता है। चूँकि श्रीकृष्ण ने यदु वंश में जन्म धारण किया, अत: यदु वंश तथा यादव लोग सर्वदा के लिए विख्यात रहे हैं। राजा विरज के प्रकट होने

से महाराज प्रियवत का वंश सदा से प्रसिद्ध रहा है।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के पंचम स्कन्ध के अन्तर्गत ''राजा प्रियव्रत के वंशजों का यश वर्णन'' नामक पन्द्रहवें अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।